'ब्रैड बास्क्ेट' नाम से लोकप्रिय राज्य पंजाब में कृषि नीति परिवर्तन

भावदीप कंग

जब देश के 'ब्रैड बास्केट' नामक पंजाब राज्य ने अपनी कृषि में मूलतः परिवर्तन की जुगत की तो खाद्य नीति के विश्लेषकों ने इसे गंभीरता से लिया। पंजाब की प्रस्तावित कृषि नीति 2013 के अंतर्गत चावल उत्पादन (लगभग 1. 2 मिलियन हैक्टेयर) में अत्यधिक कटौती पर विचार किया है और अनुवांशिक आशोधित आहार (जीएम) फसलों को बड़े पैमाने पर अपनाया है तथा पारिवारिक कृषि के मॉडल को प्रोत्साहन दिया जा रहा है।

यह राज्य भारत के केंद्रीय अनाज के पूल में गेहूँ और चावल का सबसे बड़ा योगदान देने वाला राज्य है, यदि इसकी कृषि नीति में परिवर्तन हुआ तो सार्वजनिक वितरण प्रणाली के लिए गंभीर बाधाएं उत्पन्न होंगी। यह भी तथ्य है कि यह राज्य विश्व का दूसरा सबसे बड़ा बिक्री योग्य चावल का उत्पादक है और गेहूँ के मामले में यह तीसरा है, इससे यह प्रतीत होता है कि राज्य सरकार की इस नीति से विश्व स्तर पर भी कठिनाईयां उत्पन्न होंगी।

इस नीति से पंजाब के कृषि क्षेत्र में सभी ओर संकट पैदा हो सकता है। 11वीं पंचवर्षीय योजना के दौरान राज्य में कृषि वृद्धि दर मात्र 1.6 प्रतिशत थी जबकि शेष भारत में यह 3.4 प्रतिशत थी। इससे स्पष्ट होता है कि चालू पद्धति अस्थिर हो जाएगी और हरित क्रांति के क्षेत्र में भूमि से संबंधित और आर्थिक परिणाम प्रभावित होंगे।

इन दस्तावेजों में जल–संकट पर बल दिया गया है। चार दशक पहले पंजाब में ऐसा कोई भी स्थान नहीं था जहां जल का स्तर 10 मीटर से नीचे हो किंतु अब राज्य का 92 प्रतिशत जल क्षेत्र बहुत नीचे जा चुका है और बाकी भाग का जल खारा है। नहरों से सिंचित किया जाने वाला क्षेत्र भी कम होकर 5.5 लाख हैक्टेयर रह गया है।

नीति दस्तावेजों में कहा गया है कि बिजली के अत्यधिक उपयोग से राज्य के राजस्व पर गंभीर प्रभाव पड़ा है क्योंकि कृषि क्षेत्र को निःशुल्क बिजली देना कठिन होता जा रहा है। इसमें माना गया है कि भूमि की उर्वरता प्रभावित हो रही है, भूमि में भारी धातु की मात्रा जमा हो रही है, अत्यधिक कीटनाशकों का उपयोग तथा उत्पादकता बनाए रखने के लिए औजारों की आवश्यकता बढ़ रही है जिस कारण कृषि आय में कमी आ रही है और वृद्धि दर स्थिर हो रही है। इसमें यह भी उल्लेख है कि अन्य राज्यों में उत्पादकता बढ़ रही है जिस कारण भारतीय खाद्य निगम का खरीद आधार भी बढ़ रहा है। लंबे अंतराल में पंजाब को अपने उत्पादन को बेचने के लिए इसी प्रकार की लाभकारी मंडियों की तलाश करनी पड़ेगी। पाकिस्तान के साथ सीमा पार व्यापार करने की एक संभावना हो सकती है।

सामान्य रूप में इस संकट को सभी स्वीकार करते हैं और कृषि नीति के मसौदे में प्रस्तावित समाधान, जो सरकारी पैनल ने सुझाए हैं, किसी को भी संतुष्ट नहीं करते हैं न तो किसानों, सरकार और न ही कर्मठ कार्यकर्ताओं को। उदाहरण के लिए बिजली में छूट की मात्रा कम करना, रिटेल में प्रत्यक्ष विदेशी निवेश (एफडीआई), किसानों को न्यूनतम समर्थन मूल्य देने के लिए कमीशन एजेंटों को शामिल करना, राज्य सरकार की

विद्यमान नीति के विरूद्ध है। हाल ही में उद्योगों को दी जाने वाली बिजली की लागत में वृद्धि की है ताकि किसानों को सस्ती बिजली देने के कारण राज्य बिजली बोर्डों को हाने वाली हानि में कमी की जा सके।

किसानों के परिपेक्ष्य में यह नीति लागू करने योग्य नहीं है। पर्यावरण कारणों से किसान अपनी कृषि पद्धति और फसलों में परिवर्तन नहीं कर सकते। उनका अधिक ध्यान अपनी तत्काल आर्थिक एवं महत्वपूर्ण आवश्यकताओं को पूरा करने की ओर है।

मक्का और दालों का उत्पादन बढ़ाना कागजों में तो अच्छा लगता है, किंतु क्या केंद्रीय सरकार इन्हें चावल जितना लाभकारी बना सकती है, क्योंकि इनके लिए भी न्यूनतम समर्थन मूल्य बढ़ाने होंगे। केंद्रीय सरकार द्वारा न्यूनतम समर्थन मूल्य दिया जाता है। वास्तव में इसका प्रमुख लक्ष्य कृषि क्षेत्र में आर्थिक सहायता कम करके राजस्व घाटे में कमी करना है और ऐसा करने से कुछ चुने हुए उत्पादनों पर ही न्यूनतम समर्थन मूल्य बढ़ाना होगा।

निरंतर कृषि केंद्र (सेंटर फार सस्टेनेबल एग्रिकल्चर) के डॉ. रमणजानेयुलु इस नीति को एक अभियान के रूप में देखते हैं जो जीएम बीज के मालिक, जैसे मौनसेंतो, के लिए व्यापार खोलना होगा। शीघ्र ही भारत मक्का, सोया और कपास उत्पादक देश बन जाएगा और इन सब फसलों के बीजों की प्रजातियों का पेटेंट मौनसेंतो के पास है। इन फसलों को उगाने के लिए कई अग्रणीय और पिछड़े संपर्क हो सकते हैं जो सरकार द्वारा स्थापित किये गए हैं और इन्हें पब्लिक प्राइवेट पार्टनरशिप का नाम दिया गया है।

बागवानी के क्षेत्र में फसलों (सब्जियां, फल और दूग्ध उत्पादक पारिवारिक कृषि) का विविधीकरण आवश्यक है। किंतु इसके लिए बाजार आसूचना (मार्केट इंटेलिजेंस) की कमी है – कांडी में कीनू उगाने का सुझाव दिया गया था – यह सुनने में अच्छा लगता है किंतु इसके उत्पादन से बाजार भरा पड़ा है क्योंकि इसका उत्पादन सिरसा जिले में भी होने लगा है।

पंजाब में रोजगार पाने के लिए युवाओं को कौशल सिखाने और प्रशिक्षण देने के संबंध में सत्य यह है कि यदि कोई निर्णय कर ले तो कोई भी व्यक्ति पंजाब में बेरोजगार नहीं रह सकता क्योंकि वहां मजदूरों की बहुत कमी है। सहकारी सेवा केंद्र से पट्टे पर कृषि मशीनें (मजदूरों की कमी पूरी करने के लिए) उपलब्ध कराने का एक अच्छा विचार है किंतु बजट का एक तिहाई भाग इसे कार्यशील बनाने के लिए अवश्य चाहिए होगा। एक केंद्र को 10 लाख रू. की राशि अपर्याप्त है, यह कम से कम 30 लाख रू. होनी चाहिए ताकि कार्य संपन्न हो सके। इसका कारण यह है कि इन मशीनों या उपकरणों की एक समय में ही आवश्यकता होती है। उदाहरण के लिए एक विशेष पखवाड़े में ही सभी किसानों को गेहूँ के बीजों की ड्रिल मशीन की आवश्यकता होती है। कृषि विस्तार के माध्यम से नई तकनीक उपलब्ध कराने के संबंध में सच यह है कि विचार निष्क्रिय हो चुका है क्योंकि वर्तमान रिक्तियों को भरने के लिए ही पर्याप्त निधियां नहीं हैं। पशुपालन के माध्यम से किसानों की आय के साधनों में विविधीकरण लाने का अच्छा सुझाव है लेकिन पशुओं की नस्ल सुधारना एक दीर्घकालिक समाधान होगा। वर्तमान में तो केवल पशु चारे की आवश्यकता है।

पंजाब आधारित खेती विरासत मिशन के उमेंद्र दत्त पूछते हैं कि नीति निर्माताओं द्वारा 'फार्मर सेंट्रिक' के स्थान पर 'टैक्नो–सेंट्रिक' की पद्धति क्यों अपनाई गई। सार्वजनिक नीति और निजी क्षेत्र के निवेश द्वारा उपलब्ध कराई

जाने वाली तकनीकी रणनीति में कोई परिवर्तन नहीं है। पुरानी नियत चार पद्धतियां – तकनीकी, उर्वरक, सिंचाई, ऋण – चलती रहेंगी क्योंकि ऋण में फंसे किसानों को इससे कोई राहत नहीं मिलेगी और कृषि से आय में भी वास्तविक वृद्धि नहीं होगी।

विशेष रूप से उनका पूछना है कि निजी क्षेत्र पर इतनी निर्भरता क्यों : निजी मालिकों की तकनीक और औजारों के उपयोग से सिंचाई की लागत में वृद्धि होगी – निजी क्षेत्र को बढ़ावा देने से उन पर कोई निश्चित दायित्व नहीं बन पाता है और किसानों को गंभीर समस्याओं का सामना करना पड़ता है।

उमेंद्र दत्त आगे कहते हैं कि पूरी तरह से बाह्य उपकरण आधारित कृषि में निरंतरता नहीं बनी रह सकती। बड़ी समस्या है कि पंजाब के टैक्नोक्रैट्स नवीनतम तकनीकी को अपनाना नहीं चाहते और यह निर्णय कहीं और लागू हो जाता है। इस पद्धति में इस बात का भी कोई उल्लेख नहीं है कि टुकड़ों में बंटी हुई कृषि भूमि को एक सामूहिक उद्योग बना दें या कोई ऐसा ढांचा उपलब्ध कराएं जिससे किसान सीधे अपनी फसलों का विपणन कर सके।

इस नीति का समग्र महत्व प्रश्नयोग्य या संदेहात्मक हो सकता है फिर भी उमेंद्र दत्त इसके कुछ सुझावों से सहमत हैं। उदाहरण के लिए कृषि आय के साधनों में विविधता लाना, दालों और तिलहनों के लिए वैकल्पिक रणनीति अपनाना, सब्जियां उगाने के लिए पारिवारिक कृषि पर बल, एक विशेष स्तर तक निःशुल्क आपूर्ति के पश्चात् बिजली प्रभार लेना, खेत जलाने को रोकने के लिए कानून बनाना, 'एसआरआई' (कम निवेश, अधिक आय अर्जित करने वाली जैविक कृषि तकनीक) को बढ़ाना, भू–जल के उपयोग को सीमित करना, प्राकृतिक जल स्रोतों के संचय की क्षमता को बढ़ाना, बाजार में भरपूर फसल आने की स्थिति में मूल्य प्रतिपूर्ति निधि तैयार करना, काश्तकार किराएदारों की पहचान पद्धति अपनाना और उपजाऊ कृषि भूमि का अधिग्रहण नहीं करना।

यह नीति एक कदम आगे है या अवसर खोने की स्थिति है, यह इस बात पर निर्भर है कि कौन इस बारे में कैसे सोचता है। यह एक शैक्षिक सोच का विषय है कि हम में से अधिक को यह नहीं मालूम कि इस नीति के क्रियान्वयन के लिए संसाधन कहां से आएंगे।

लेखक एक वरिष्ठ पत्रकार हैं जो कृषि विशेषज्ञ भी हैं।

संपादकीय

अपने लिए अनाज उगाने वाले किसानों को ही सस्ता अनाज देने की नीति से मेरे विचारों को बल मिला है कि एक सरकार उतनी ही अच्छी हो सकती है जितने इसके सलाहकार। यह भारतीय किसानों का दुर्भाग्य है। इस खाद्य अधिनियम के अधिकतम प्रस्तावित लाभकारी छोटे किसानों के परिवार हैं। किसानों को सक्षम बनाने के स्थान पर और उन्हें जो वे खाना चाहते हैं वह फसल उगाने के लिए प्रोत्साहित करने के स्थान पर भारतीय नीति निर्माता उन्हें सस्ती दर पर अनाज देने पर गंभीरता से वाद–विवाद करते हैं। इस प्रकार के उपाय तब आवश्यक हैं जब सूखा पड़े या फसल में अंतर लाने जैसा कोई संकट हो किंतु समग्र वृद्धि हेतु दीर्धकालीक समाधान के रूप में इसकी सिफारिश करना उपयुक्त नहीं है।

खाद्य सुरक्षा बिल का प्रस्तावित वार्षिक व्यय पिछले दशक में कृषि मंत्रालय को कुल आवंटित बजट जितना ही होगा यदि इनकी तुलना की जाए। इस राशि को यदि कृषि अनुसंधान, विस्तार और आधारभूत सुविधाओं हेतु समझदारी से निवेश किया जाता तो प्रत्येक किसान परिवार समृद्धशाली बन सकता था और भारत अनाज के क्षेत्र में आत्मनिर्भर बन सकता था और इसका परिणाम समग्र वृद्धि के रूप में सामने आता। इतनी बड़ी राशि के निवेश से निर्धनता और कुपोषण जैसी समस्या समाप्त हो सकती थी जो आज तक लाईलाज है।

भारत की आधी से अधिक जनसंख्या अभी भी कृषि पर निर्भर है और हमें इस क्षेत्र को लाभकारी बनाने के लिए वरीयता दी जानी चाहिए। यदि अधिकतम लोगों को लाभकारी उद्योगों में लगा दिया जाए तो क्या हम एक राष्ट्र के रूप में सफल हो पाएंगे और कल्याणकारी नीतियों का बोझ उठाने में भी असफल रहेंगे।

केवल सरकार द्वारा न्यूनतम समर्थन मूल्य पर खरीदी जाने वाली मुख्य फसलें जनता में सस्ती दरों पर वितरित की जाएंगी। ऐसा करने से किसानों की उपजों का बाजार पूर्ण रूप से नष्ट हो जाएगा जिससे किसान पूर्ण रूप में सरकार की खेरात पर निर्भर हो जाएंगे। सरकार इस दबाव में आ जाएगी कि वह बजट का घाटा कम करने के लिए न्यूनतम समर्थन मूल्य में पर्याप्त वृद्धि न करे और अनाज की कीमत में मुद्रास्फीति कम करने के लिए भी दबाव होगा।